मसीह की महिमा के लिए नई आराधना

एक ही दिन में हज़ारों यहूदियों का आराधना करने का ढंग बदल गया! क्योंकि पिन्तेकुस्त के दिन पतरस से सुसमाचार सुनने के बाद कम से कम तीन हज़ार लोगों का धार्मिक जीवन एकदम बदल गया था।

जीवन भर मूसा की व्यवस्था की बातें मानने के बाद, प्रेरितों 2 अध्याय में मसीही बनने वाले यहूदियों में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन आया। अचानक ही हज़ारों लोग परमेश्वर की आराधना उस ढंग से करने लगे थे जिसे उन्होंने न देखा और न कभी सुना था। उनके जीवनों से पुराने नियम की सभी परिचित बातें एक दम से निकल गई थीं। कोई विशेष बात हुई थी अर्थात व्यवस्था को बुरी तरह से हिला देने वाली विशेष घटना घटित हो गई थी। यीशु के क्रूसारोहण की वही बात हुई थी जिसकी ये लोग आशा कर रहे थे। इस प्रकार की नई आराधना के लिए निर्देश केवल परमेश्वर की ओर से ही मिल सकते थे।

एक नई आराधना दिखाई गई

मसीह में अपने मन परिवर्तन के बाद, इन मसीहियों ने आराधना करने और नये जीवन में चलने का नया ढंग स्वीकार कर लिया था। ''वे प्रेरितों से शिक्षा पाने, और संगति रखने में और रोटी तोड़ने में और प्रार्थना करने में लौलीन रहे'' (प्रेरितों 2:42)। पिन्तेकुस्त के इस दिन से पहले हमें शास्त्र में कहीं भी यह पढ़ने को नहीं मिलता कि यीशु के चेलों ने इस प्रकार का व्यवहार किया हो। वे इन बातों में उतने ही ''स्थिर'' थे जितने वे व्यवस्था के प्रति निष्ठावान थे।

लूका ने पिन्तेकुस्त के इस दिन से आरम्भ होने वाले चार कार्यों का उल्लेख किया। पहला, मसीही लोग व्यवस्था की शिक्षाओं को मानने के बजाय प्रेरितों की शिक्षा अर्थात ''प्रेरितों की शिक्षाओं'' को मानने लगे। वे प्रेरितों की शिक्षा के अनुसार ही जीवन व्यतीत करने लगे चाहे यह व्यवस्था से मेल खाती थी या नहीं। यहां तक कि बहुत सी शिक्षा देने के लिए वे मन्दिर के सार्वजनिक कमरों का भी इस्तेमाल करने लगे थे (प्रेरितों 2:46)।

दूसरा वे व्यवस्था के दशमांशों में लगे रहने के बजाय ''संगति'' (*koinonia*) में बने रहे। नये नियम में ''संगति'' शब्द के कई अर्थ हो सकते हैं, परन्तु इस संदर्भ में यह स्पष्टत: इस जीवन की आवश्यकताओं में सहभागिता करना है। नये बने मसीही यरूशलेम

में इस दौरान किसी भी ज़रूरतमंद की जरूरत को पूरा करने के लिए अपनी सम्पत्तियां और भूमि को बेचने लगे थे (प्रेरितों 2:45)। कुछ समय के बाद, अधिकतर यहूदी यात्रियों ने अपने घर लौटना था, परन्तु वे सभी मसीह और परमेश्वर के पुत्र के अपने राज्य में नये सिंहासन के बारे में सीखने के लिए बड़े रोमांचक और उत्सुक थे।

तीसरा, यहूदियों में से नये मसीही एक साथ ''रोटी तोड़ने'' लगे। दूसरे संदर्भों में इसी वाक्यांश का अर्थ सामान्य भोजन खाना हो सकता है, और है भी (प्रेरितों 2:46), परन्तु यहां वे प्रेरितों की शिक्षा को ग्रहण करने के कारण रोटी आराधना के एक कार्य के रूप में तोड़ते थे। यह बात तो उनके लिए नई थी, परन्तु सामान्य भोजन में रोटी तोड़ने में कुछ भी नया नहीं था। प्रेरितों 2:42 में भी इस कार्य का उल्लेख है, जहां आराधना के तीन अन्य कार्य भी दिए गए हैं। जो भोजन वे मिलकर लेते रहे, वह प्रभु भोज था (1 कुरिन्थियों 11:20-28)।

चौथा, नये मसीहियों की प्रार्थनाएं उस व्यक्ति अर्थात यीशु मसीह के नाम से थीं, जो क्रूस पर मारा गया था (1 थिस्सलुनीकियों 5:17, 18)। उसे प्रभु तथा मसीह (प्रेरितों 2:36) और उनके मध्यस्थ के रूप में माना जाता था (1 तीमुथियुस 2:5)। उनके देश के पन्द्रह सौ वर्ष के इतिहास में इससे पहले इब्राहीम के वंशजों ने मसीह यीशु के नाम से कभी प्रार्थना नहीं की थी।

इस संदर्भ में आराधना के जिस कार्य का उल्लेख नहीं है वह संगीतमय आराधना है जो यीशु के द्वारा परमेश्वर की महिमा का एक भाग बन गई। पौलुस और सीलास जब जेल में थे तो परमेश्वर की महिमा गा रहे थे (प्रेरितों 16:25)। प्रेरितों द्वारा दिए आराधना के निर्देशों में संगीत भी शामिल था। जब पौलुस कुरिन्थुस की मण्डलियों की बुराइयों और कुरीतियों को सुधार रहा था, तो उसने प्रार्थना और गाने का इस्तेमाल करके उदाहरण के रूप में दिखाने के लिए कहा ताकि आराधना की सभी बातें सब की भलाई के लिए हों और उन्हें सब लोग समझ सकें (1 कुरिन्थियों 14:15)। नये नियम के मसीहियों की आराधना में गाना एक कैप्पेला [कलीसिया में गाने का ढंग] था।

नई आराधना की व्याख्या

''प्रेरितों की शिक्षा''

प्रेरितों की शिक्षा (प्रेरितों 2:42) व्यवस्था से ऊपर थी। यीशु ने दावा किया कि उसके बारे में की गई सभी भविष्यवाणियां तथ्य बन चुकी थीं; इसलिए व्यवस्था और भविष्यवक्ता अब प्रभावी नहीं रहे थे (लूका 24:44)। प्रेरितों को एक नया और अन्तिम प्रकाशन मिलना था, जिसे साधारण लोग भी पढ़ व समझ सकते थे (इफिसियों 3:3-5)। यह प्रकाशन परमेश्वर की ओर से था और इसने कभी भी किसी दूसरे सुसमाचार में नहीं बदलना था (गलतियों 1:6-9)। यह स्वर्ग की ओर से अन्तिम संदेश था और उद्धार की खोज करने वालों को ''एक ही बार'' सौंपा गया था (यहूदा 3)।

वे बारह (और बाद में पौलुस भी) मसीह के अधिकार से बोलते थे, क्योंकि उन्हें पवित्र आत्मा की प्रेरणा मिली हुई थी (यूहन्ना 14:25, 26; 15:26; 16:7, 8)। ''आत्मा की प्रेरणा'' किसी असामान्य या सामान्य मानवीय कोशिश को नहीं कहा गया है। बल्कि, यह वक्ताओं तथा लेखकों पर परमेश्वर के आत्मा के कार्य को कहा गया है। परमेश्वर के आत्मा ने जो कुछ कहना और लिखना था उसके लिए उसने उनमें श्वास फूंक कर उन्हें प्रेरणा दी थी। ये सत्य बाद में परमेश्वर के श्वास से प्रेरितों और नये नियम की पुस्तकों के अन्य लेखकों के श्वास में डाले गए। इसलिए, हर एक पवित्र शास्त्र ''परमेश्वर के आत्मा की प्रेरणा से है'' (2 तीमुथियुस 3:16, 17)। प्रेरितों की इन शिक्षाओं के पीछे कोई स्वाभाविक नहीं बल्कि ईश्वरीय अधिकार था (1 कुरिन्थियों 2:13)।

नये सत्यों तथा शास्त्र की यह समझ व्यवस्था के उचित तथा सही उद्देश्य को दिखाती है: यह इस्राएल जाति को मसीह तक लाने के लिए एक ''स्कूल मास्टर'' या ''शिक्षक'' था (गलतियों 3:23-25)। अब मसीह के आने से वह ''विश्वास'' भी प्रकट होकर पूर्ण हो गया था तथा मूसा की व्यवस्था भी प्रभावी नहीं रही थी। इसने अपना उद्देश्य पूरा कर लिया था। छुटकारे की परमेश्वर की योजना में इसका अपना ही स्थान था, क्योंकि यह यहूदियों को यीशु के मसीह होने की ओर ले आती थी। प्रेरितों द्वारा दी गई नई शिक्षाएं परमेश्वर के आराधकों को उस समय के बाद सम्मान तथा उनको मानने के लिए दी गईं।

''प्रेरितों की शिक्षा'' में एक दिलचस्प व्याकरणीय संरचना है। यह 2 यूहन्ना 9, 10 में संगति के विषय में एक बड़े ही विवादपूर्ण पद की तरह है:

> जो कोई आगे बढ़ जाता है, और मसीह की शिक्षा में बना नहीं रहता, उसके पास परमेश्वर नहीं: जो कोई उसकी शिक्षा में स्थिर रहता है, उसके पास पिता भी है, और पुत्र भी। यदि कोई तुम्हारे पास आए, और यही शिक्षा न दे, उसे न तो घर में आने दो, और न नमस्कार करो।

यहीं पर वाक्यांश ''मसीह की शिक्षा'' मिलता है। यूनानी भाषिक संरचना में, दोनों का अर्थ बिल्कुल एक ही है। ''मसीह की शिक्षा'' के बारे में विवाद करने वालों को यह समझ है कि इसका अर्थ या तो *मसीह के बारे में दी जाने वाली शिक्षाएं* हो सकता है या *वे शिक्षाएं जो मसीह ने दीं।* यदि इसका अर्थ मसीह के बारे में दी जाने वाली शिक्षाएं ही है, तो उन सभी लोगों के साथ संगति रखी जानी चाहिए जो उसे परमेश्वर के पुत्र के रूप में मानते हैं, चाहे वे किसी भी साम्प्रदायिक कलीसिया से सम्बन्ध रखते हों या किसी भी आराधना पद्धति को मानते हों।

दूसरे यदि इसका अर्थ मसीह और उसके प्रेरितों द्वारा दी जाने वाली शिक्षाएं है, तो संगति केवल उन्हीं लोगों से होनी चाहिए जो नये नियम की सभी शिक्षाओं के प्रति निष्ठावान हों। इससे जहां एक ओर तो, यीशु को मसीह मानने वाले किसी भी व्यक्ति से

खुली संगति होगी; वहीं दूसरी ओर, प्रेरितों की समस्त शिक्षा के प्रति निष्ठावान लोगों में एक विलक्षण संगति भी होगी।

इन पदों की व्याकरणीय संरचना एक जैसी होने के कारण प्रेरितों 2:42 का अनुवाद ''प्रेरितों की शिक्षा'' के बजाय ''प्रेरितों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा'' भी हो सकता है। इसी प्रकार, 2 यूहन्ना 9 का अनुवाद ''मसीह की शिक्षा'' हो सकता था। फिर, इससे इस बात का भी प्रमाण मिल जाता है कि यूहन्ना की शिक्षा में सीमित संगति है और यीशु को मसीह मानने वाली किसी भी साम्प्रदायिक कलीसिया से संगति नहीं हो सकती। जो लोग प्रभु द्वारा ठहराई संगति की रेखाओं को तोड़ना चाहते हैं उनके लिए 2 यूहन्ना 9 का सही अर्थ बताना कठिन है।

''संगति''

संगति, परिवर्तित होने वाले यहूदियों द्वारा अपनाया गया नया परिवर्तन है, जिन्होंने अपनी सम्पत्ति के सम्बन्ध में और जरूरतमंदों के बारे में अपने विचार बदल लिए थे। उदार अर्थ में *कोयनोनिया* शब्द धार्मिक अवसरों में भाइयों की संयुक्त सहभागिता को दर्शाता है। अन्य संदर्भों में, इसका इस्तेमाल उस संगति के लिए किया जाता है जो मसीही लोगों की पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के साथ है (2 कुरिन्थियों 13:14); वह संगति जो मसीहियों की आपस में है (1 यूहन्ना 1:7); और वह संगति जो मसीहियों की प्रभु भोज में क्रूस पर प्रभु की देह और लहू के साथ है (1 कुरिन्थियों 10:16)।

कोयनोनिया शब्द का इस्तेमाल स्पष्ट रूप से दूसरों के साथ अपनी सांसारिक सम्पत्ति बांटने के लिए भी किया जाता है (रोमियों 15:26; 2 कुरिन्थियों 9:13)। पौलुस ने तर्क दिया कि फलस्तीनियों ने रोम में रहने वालों के साथ सुसमाचार को बांटा था इसलिए रोम के मसीहियों को भी फलस्तीन के लोगों के साथ जिन्हें भौतिक वस्तुओं की आवश्यकता थी, बदले में अपनी सांसारिक वस्तुओं को बांटना चाहिए। पौलुस ने फिलिप्पी की कलीसिया में मसीहियों को यह भी याद दिलाया कि वे उसकी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता के लिए विश्वासी रहे थे (फिलिप्पियों 1:5; 4:14-16)।

प्रेरितों 2 के इस संदर्भ में, ''संगति'' सम्भवत: वहां आने वाले यहूदियों, सुसमाचार को नया-नया मानने वालों अर्थात नए मसीहियों की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करना है जो सुसमाचार के बारे में और अधिक सीखने की इच्छा से कई महीनों तक यरूशलेम में थे। इतिहासकार लिखते हैं कि ऐसा बहुत से परिवारों के साथ हुआ जो यरूशलेम नगर के आस-पास बहुत दिनों से रह रहे थे और उन्हें घर वापस जाने के लिए भोजन और धन की आवश्यकता थी।

प्रभु के कार्य के लिए चन्दा देने की एक और नई गुप्त बात का पता चलता है कि अब दशमांश का कोई उल्लेख नहीं था! दशमांश व्यवस्था के पहले से ही दिया जाता था, जैसे

इब्राहीम ने मलकिसिदेक को दिया था (इब्रानियों 7:1-4)। मसीह के सुसमाचार में दशमांश के बारे में किसी और शिक्षा का अभाव संकेत देता है कि उनके चन्दा देने का ढंग बदल गया था। नई व्यवस्था के अधीन चन्दा किसी की आमदनी के अनुसार (1 कुरिन्थियों 16:2), अर्थात जितना उसके पास हो उसी के अनुसार दिया जाना था (2 कुरिन्थियों 8:14, 15)। दान उदारता से, उद्देश्य से और प्रसन्नता से दिए जाने थे (2 कुरिन्थियों 9:6, 7)।

''रोटी तोड़ना''

परमेश्वर की प्रेरणा से क्रूस पर यीशु की मृत्यु के सम्मान में रोटी तोड़ना आराधना के बदले हुए ढंग में एक विशेष स्मरणीय भोज था। यह भोज प्रभु की मृत्यु के स्मरण में था (1 कुरिन्थियों 11:26), और प्रभु द्वारा खुद को पकड़वाए जाने वाली रात भोज के समय दिए गए निर्देशों के अनुसार खाया जाना था (मत्ती 26:26-29; लूका 22:17-20)। यह स्मरणीय भोज प्रभु के राज्य में खाया जाना था, क्योंकि इस भोज में विश्वासी मसीहियों के साथ संगति और खाने के लिए उसने स्वयं शामिल होना था (लूका 22:29, 30)। यह सहभागिता (1 कुरिन्थियों 10:16) मण्डलियों की सभाओं में की जानी थी और किसी सामान्य भोज का भाग नहीं होनी थी (1 कुरिन्थियों 11:20-22, 33, 34)।

यह स्मरणीय भोज मसीही लोगों को याद दिलाने के लिए था कि यीशु ने संसार के पापों के लिए अपनी देह और लहू दे दिया। नये नियम के मसीही इसे सप्ताह के पहले दिन अर्थात रविवार को मनाते थे (प्रेरितों 20:7)। आरम्भिक मण्डलियों के लिए रविवार की सभाएं आम बात थी। पौलुस ने जरूरतमंदों की सहायता के लिए चन्दा इकट्ठा करने के निर्देश देते हुए कहा कि यह उसी दिन हो सकता है जिस दिन वे पहले से ही नियन्त्रित रूप में इकट्ठे होते हैं (1 कुरिन्थियों 16:2)। पौलुस मसीही लोगों को सप्ताह के पहले दिन इकट्ठा होना आरम्भ करने के लिए नहीं बल्कि उन्हें निर्देश दे रहा था कि सप्ताह के पहले दिन जब वे अपनी मण्डलियों में इकट्ठे हों तो उस समय चन्दा इकट्ठा करके एक ओर रखते रहें।

पहले दिन की ये प्रार्थना सभाएं बहुत महत्वपूर्ण हैं। यहूदी लोग व्यवस्था के अनुसार सातवें अर्थात सब्त के दिन इकट्ठा होने के आदी थे। यहूदियों में से बने नये मसीही रविवार अर्थात पहले दिन विशेष आराधना करते थे। यीशु ने बपतिस्मा लेने वाले विश्वासी प्रेरितों को आज्ञा दी थी ''सब बातें जो मैं ने तुम्हें आज्ञा दी है,'' सिखाते रहें (मत्ती 28:20)। यदि प्रेरितों ने नये बने मसीहियों को यीशु के सम्मान में सप्ताह के पहले दिन इकट्ठे होना सिखाया, तो यह अवश्य ही उस आज्ञा का प्रत्यक्ष परिणाम होगा जो यीशु ने उन्हें दी थी। बाइबल के छात्र इससे अच्छा और कोई निष्कर्ष नहीं निकाल सकते कि प्रभु की आराधना के लिए सप्ताह के पहले दिन की सभाएं, जिनमें प्रभु भोज भी शामिल है, इसलिए आरम्भ हुईं क्योंकि यीशु ने उन्हें आरम्भ करने की आज्ञा दी थी। प्रेरित वही सिखाते रहे जो यीशु ने आज्ञा दी थी और नये मसीही प्रेरितों की शिक्षा को मानते रहे।

''**प्रार्थना**''

इन नाटकीय परिवर्तनों के अलावा, प्रार्थनाएं भी बदल गईं और अलग ढंग से की जाने लगी थीं अर्थात पिन्तेकुस्त के इस दिन से पहले, ये मसीही यहोवा परमेश्वर के पास प्रार्थना करते थे; परन्तु अब वे यहोवा परमेश्वर के पास मध्यस्थ यीशु मसीह के द्वारा प्रार्थना करने लगे थे (कुलुस्सियों 3:17; रोमियों 1:8, 9; 1 तीमुथियुस 2:5)। पहले, ये यहूदी लोग पिता को सम्मानपूर्वक सम्बोधित करते थे; परन्तु अब वे पिता को उसी सम्मान से पुत्र के द्वारा सम्बोधित करने लगे थे।

प्रेरितों की शिक्षा, संगति, रोटी तोड़ना, प्रार्थनाएं वे सब परिवर्तन थे जो प्रेरितों 2 में पिन्तेकुस्त के दिन नये सुसमाचार के प्रचार से आए थे।

एक नई आराधना का अनुभव

यूहन्ना 4:21-24 में, यीशु ने कुएं पर सामरी स्त्री से प्रतिज्ञा की थी कि अब आराधना का आधार यह नहीं होगा कि कोई यरूशलेम में करता है या सामरिया के पहाड़ों में; बल्कि सच्ची आराधना का आधार यह होगा कि यह ''आत्मा और सच्चाई'' से की जाएगी। सामरी लोग उन विद्रोहियों के वंशज थे जिन्होंने इस्राएल राज्य के विभाजन के समय यारोबाम का साथ दिया था (1 राजा 12; 13)। उनका दावा था कि इब्राहीम की संतान यरूशलेम में गए बिना ही सामरिया के पहाड़ों में आराधना कर सकती है। विश्वासी इस्राएली यरूशलेम में ही फसह का त्यौहार मनाते रहे, परन्तु यारोबाम ने फसह के मुकाबले एक और पर्व का प्रचलन कर दिया ताकि उसके अनुयायी यरूशलेम जाकर रहूबियाम की सेवा न कर पाएं (1 राजा 12:26-33)।

सामरी स्त्री के साथ बात करते हुए, यीशु ने सदियों पुराने विवादों को नज़रअन्दाज कर दिया और घोषणा की कि शीघ्र ही परमेश्वर की आराधना का ढंग बदल जाएगा क्योंकि लोग आत्मा से आराधना करने लगेंगे। ''आत्मा से'' आराधना करने का भाव आराधक के मन के निश्चयों तथा उद्देश्यों से है। ''सच्चाई से'' आराधना करने का अर्थ है कि आराधना करने वाले के कार्य सच्चाई अर्थात परमेश्वर के वचन के अनुसार होने चाहिए। खोखले संस्कारों से की गई आराधना परमेश्वर को अस्वीकार्य है। आराधना की वे बातें भी स्वीकार्य नहीं हैं जिनकी परमेश्वर ने आज्ञा नहीं दी।

सच्ची आराधना की कई विशेषताएं हैं। पहली बात, सच्ची आराधना *आन्तरिक है।* यद्यपि इसमें आराधकों के मनों के बाहरी कार्य शामिल हो सकते हैं, परन्तु सच्ची श्रद्धा और महिमा प्रत्येक आराधक के मन से निकलनी चाहिए।

दूसरा, सच्ची आराधना *साभिप्राय* है। यह आराधना मन के किसी उद्देश्य से की जाती है। आराधना बिना जाने और समझे अचानक नहीं की जा सकती। केवल शारीरिक हाव-भाव से ही आराधना नहीं हो सकती अर्थात आराधना करने के लिए पूरी तरह से तैयारी होनी आवश्यक है।

तीसरा, आराधना *शीर्षस्थ* है। आराधना दूसरे आराधकों के लिए या उन पर निर्भर होकर नहीं होती। सच्ची आराधना दूसरों से अपनी तारीफ़ करवाने या उनकी स्वीकृति के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर की स्तुति और महिमा के लिए होती है। दूसरों के लाभ के लिए अभिनय करना प्रभु की आराधना के अनुपयुक्त है। जब कोई व्यक्ति शिक्षा देता या गीत गाता है, तो सुनने वालों को कुछ लाभ होता है; परन्तु साथ ही मसीही लोग भजन, स्तुति गान और आत्मिक गीत गाकर ''एक दूसरे से बातें करते हुए,'' अपने-अपने मन में ''धन्यवाद के साथ परमेश्वर के लिए'' भजन कर रहे होते हैं (कुलुस्सियों 3:16; ROV; इफिसियों 5:19)। आराधना केवल परमेश्वर की ही हो सकती है।

चौथा, सच्ची आराधना *क्षणिक* है। आराधना परमेश्वर की इच्छाओं के प्रत्युत्तर में अपने व्यवहार को दिखाना है। कोई व्यक्ति कहीं भी किसी भी समय कई प्रकार से आराधना कर सकता है। प्रेरितों के काम में, प्रार्थना और गीत गाना कई अवसरों पर हुआ, उनमें एकांत स्थान भी थे और सार्वजनिक भी, जो कि किसी के मन की लीनता पर निर्भर था। आराधना क्षणिक है और उन कार्यों तक सीमित है जो कोई व्यक्ति साभिप्राय परमेश्वर के वचन के प्रत्युत्तर में उसके लिए करता है।

इसलिए, सच्ची आराधना व्यर्थ नहीं है (मरकुस 7:7)। यह अज्ञानता नहीं है (प्रेरितों 17:23) और मनुष्य की इच्छा या निर्णयों के अनुसार नहीं की जाती है (कुलुसियों 2:23)।

सारांश

अब परमेश्वर की आराधना हर जगह रहने वाले सभी मसीही लोगों के लिए एक अवसर के समान है। यह किसी विशेष देश या किसी याजकाई तक ही सीमित नहीं है। सभी मसीहियों को याजकों का पद दिया गया है, ताकि वे परमेश्वर की स्वीकार्य आराधना कर सकें (1 पतरस 2:5, 9-11)। यद्यपि, आराधना के कार्य (प्रभु भोज, प्रार्थना, गीत गाना, वचन सुनना और चन्दा देना) पवित्र लोगों की सभाओं में किए जाने आवश्यक हैं, परन्तु इन में से कुछ कार्य कहीं भी कभी भी किए जा सकते हैं। एक अपवाद प्रभु भोज है जिसे सप्ताह के पहले दिन के अलावा किसी और दिन कभी नहीं खाया जाता था। प्रेरितों के काम की पूरी पुस्तक में गीत गाना, प्रार्थना करना, वचन सुनना और चन्दा देना सप्ताह के पहले दिन के अलावा दूसरे दिनों में भी होता था। इसलिए, हमें इस पुस्तक से निष्कर्ष निकालना चाहिए कि प्रभु भोज किसी भी दूसरे दिन खाना परमेश्वर को स्वीकार्य नहीं है। प्रभु किसी और दिन नहीं जी उठा था और न ही कोई और दिन उसकी मृत्यु के विशेष स्मरण के लिए ठहराया गया है।

प्रभु का दिन विशेष श्रद्धांजलि तथा स्मरण का दिन है (प्रकाशितवाक्य 1:10)। हमें पूरे सात दिन मसीह और उसके बलिदान से अपने पापों की क्षमा को स्मरण रखने का अद्‌भुत अवसर मिला है।

आराधना परमेश्वर की ही होनी है, इसलिए इस बात का सही चुनाव करने का अधिकार केवल उसे ही है कि उसकी महिमा के लिए मनुष्यों को क्या करना चाहिए। लोगों द्वारा आराधना के लिए अपने ही नियम बनाना कितने घमण्ड की बात है! अक्सर लोग परमेश्वर के वचन की स्पष्ट शिक्षा के विपरीत वही करना पसन्द करते हैं जो उन्हें अच्छा लगता है।

प्रेरितों के काम में यहूदी पृष्ठभूमि से आने वाले, नये मसीहियों ने परमेश्वर के नये निर्देशों को प्रसन्नतापूर्वक मान लिया। इस पुस्तक में इन लोगों द्वारा अपने जीवनों में किए गए अद्‌भुत परिवर्तन का इतिहास तथा आज के लोगों के लिए उनके उदाहरण विचार करने और सम्मान देने योग्य हैं।